ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL**04292**
RNI REG. NO. UPBIL/**2014/66218** **PP. No.- 173-178**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- III, Issues-41, YEAR- July-Sept. 2026

उत्तर प्रदेश के सीमांत किसान और राज्य की भूमिकाः एक गुणात्मक विश्लेषण

संजय सिंह,
2. डॉ0 शाद अहमद

शोध अध्येता– समाजशास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, 2. सहायक आचार्य, मुमताज पी.जी. कॉलेज, लखनऊ (उ0प्र0) भारत

Received-19.07.2026, Revised-28.07.2026, Accepted-06.08.2026, E-mail:snsingh4375@gmail.com

सारांशः प्रस्तुत शोध–पत्र उत्तर प्रदेश के ग्रामीण समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में सीमांत किसानों, अर्थात् जिनके पास 1 हेक्टेयर से कम कृषि भूमि है, की सामाजिक–आर्थिक स्थिति तथा उनके उत्थान में राज्य की भूमिका का व्यापक गुणात्मक एवं संरचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। कृषि गणना 2015–16 तथा राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन के 77वें दौर के द्वितीयक आँकड़ों को आधार बनाकर इस शोध में यह समझने का प्रयास किया गया है कि भूमि के निरंतर होते विखंडन ने उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र में वर्ग और जाति के समीकरणों को किस प्रकार प्रभावित किया है।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण, विशेषकर कृषि संबंधों संबंधी सिद्धांतों का उपयोग करते हुए यह शोध उजागर करता है कि राज्य द्वारा संचालित कल्याणकारी योजनाएँ, जैसे प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि, महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना तथा संस्थागत ऋण नीतियाँ, सीमांत किसानों को तत्काल राहत तो प्रदान करती हैं, परंतु संरचनात्मक असमानताओं, बिचौलियों के जाल और बाजार की अनिश्चितताओं को दूर करने में केवल आंशिक रूप से सफल रही हैं।

उत्तर प्रदेश में कृषि का सीमांतीकरण केवल एक आर्थिक समस्या नहीं है, बल्कि यह जातिगत स्तरीकरण, प्रवासन आदि सामाजिक प्रक्रियाओं से भी गहराई से जुड़ा हुआ है। यह शोध राज्य की नीतियों में संरचनात्मक सुधारों और विकेंद्रीकृत कृषि प्रबंधन की आवश्यकता पर बल देता है।

कुंजीभूत शब्द– सीमांत किसान,राज्य की भूमिका,उत्तर प्रदेश, कृषि संकट, वर्ग–जाति गतिशीलता,गुणात्मक विश्लेषण ,राहत, बिचौलिया।

प्रस्तावना– उत्तर प्रदेश ऐतिहासिक और भौगोलिक दृष्टि से भारत का एक अत्यंत महत्वपूर्ण कृषि–प्रधान राज्य है। देश की कुल खाद्यान्न उत्पादकता में लगभग 20 प्रतिशत योगदान देने वाले इस राज्य की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि और उससे संबंधित क्षेत्र हैं। हालाँकि, इस विशाल उत्पादकता के पीछे छिपी सामाजिक वास्तविकता अत्यंत जटिल और चिंताजनक है।

उत्तर प्रदेश के कृषि परिदृश्य की सबसे प्रमुख विशेषता यहाँ कृषि संरचना का सीमांतीकरण है। कृषि गणना के अनुसार, राज्य के कुल कृषकों में से लगभग 80.18 प्रतिशत किसान सीमांत श्रेणी के अंतर्गत आते हैं, जिनके पास जीवन–यापन के लिए 1 हेक्टेयर (2.47 एकड़) से भी कम भूमि उपलब्ध है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से भूमि केवल उत्पादन का एक साधन मात्र नहीं है, बल्कि यह ग्रामीण समाज में सामाजिक प्रतिष्ठा, शक्ति, जातिगत वर्चस्व और वर्ग चेतना का निर्धारण करने वाला एक प्रमुख कारक रही है। जब किसी समाज में बहुसंख्यक आबादी के पास भूमि का स्वामित्व अत्यंत सूक्ष्म और अलाभकारी स्तर पर सिमट जाता है, तो वहाँ सामाजिक स्तरीकरण और अंतर्संबंधों का एक नया ढाँचा तैयार होता है।

उत्तर प्रदेश में भूमि सुधारों की ऐतिहासिक विफलता, जनसंख्या का अत्यधिक दबाव और परिवारों के विभाजन के कारण कृषि जोतों का विखंडन तीव्र गति से हुआ है। इसके परिणामस्वरूप राज्य का पारंपरिक जमींदारी और काश्तकारी ढाँचा कमजोर हुआ, लेकिन उसने सीमांत किसानों के रूप में एक विशाल अर्ध–सर्वहारा वर्ग को जन्म दिया है, जो अपनी आजीविका के लिए कृषि और दैनिक मजदूरी दोनों पर समान रूप से निर्भर है।

इस संदर्भ में राज्य की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के अंतर्गत सरकार का यह दायित्व है कि वह सामाजिक–आर्थिक रूप से वंचित और हाशिये पर मौजूद इस वर्ग को नीतियों, नीलामियों से संरक्षण, सब्सिडी, संस्थागत ऋण और न्यूनतम समर्थन मूल्य के माध्यम से सुरक्षा प्रदान करे।

स्वतंत्रता के बाद से ही राज्य ने विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं, हरित क्रांति तथा समकालीन दौर में प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण जैसी योजनाओं के माध्यम से हस्तक्षेप करने का प्रयास किया है। परंतु समाजशास्त्रीय विश्लेषण यह प्रश्न उठाता है कि क्या राज्य की ये नीतियाँ वास्तव में सीमांत किसानों के संरचनात्मक सशक्तीकरण में सहायक रही हैं, अथवा इन्होंने केवल एक आश्रित वर्ग का निर्माण किया है?

शोध के मुख्य उद्देश्य–

1. उत्तर प्रदेश में सीमांत किसानों की वर्तमान सामाजिक–आर्थिक स्थिति का समाजशास्त्रीय सिद्धांतों के आलोक में विश्लेषण करना।
2. भूमि विखंडन के सामाजिक परिणामों को रेखांकित करना।
3. सीमांत कृषकों के विकास और कल्याण में राज्य द्वारा संचालित प्रमुख योजनाओं की प्रभावशीलता का गुणात्मक मूल्यांकन करना।
4. ग्रामीण उत्तर प्रदेश में जाति, वर्ग और राज्य की नीतियों के त्रिकोणीय अंतर्संबंधों को समझना।

साहित्य समीक्षा– भारतीय कृषि समाजशास्त्र और ग्रामीण संरचना पर विद्वानों ने व्यापक शोध किया है। कृषि संबंधों को समझने के लिए समाजशास्त्रियों ने मार्क्सवादी, संरचनात्मक–प्रकार्यात्मक, अधीनस्थ तथा समकालीन सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्यों का उपयोग किया है।

थॉर्नर (1956) ने अपनी कृति में भारतीय ग्रामीण संरचना का वर्गीकरण करने के लिए एक त्रि–स्तरीय मॉडल प्रस्तुत किया था। मालिक, किसान और मजदूर। थॉर्नर का मानना था कि भूमि पर नियंत्रण ही ग्रामीण शक्ति का मुख्य स्रोत है। यदि थॉर्नर के इस ऐतिहासिक वर्गीकरण को आज के उत्तर प्रदेश पर लागू किया जाए, तो 'किसान' और 'मजदूर' के बीच की आर्थिक और सामाजिक रेखा पूरी तरह धुंधली हो चुकी है। आज का सीमांत किसान सुबह अपने छोटे से खेत पर काम करता है और दोपहर बाद किसी बड़े किसान के खेत अथवा शहर में जाकर दैनिक मजदूरी करने के लिए विवश हो सकता है। इस प्रक्रिया को समाजशास्त्र में कृषकों का विकृषकीकरण कहा गया है।

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- III, Issues-41, YEAR- July-Sept. 2026

देसाई (1979) ने तर्क दिया कि स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार द्वारा अपनाई गई कृषि नीतियाँ अनिवार्य रूप से पूँजीवादी रुझान वाली थीं। उनके अनुसार भूमि सुधारों और हरित क्रांति का मुख्य लाभ ग्रामीण उच्च वर्ग को मिला, जबकि सीमांत किसान और खेतिहर मजदूर हाशिये पर चले गए। उत्तर प्रदेश के संदर्भ में देसाई का यह सिद्धांत आज भी प्रासंगिक दिखाई देता है। राज्य द्वारा दी जाने वाली बड़ी सब्सिडी, जैसे बिजली और सिंचाई संबंधी सहायता, का वास्तविक लाभ बड़े जोत वाले किसानों को अपेक्षाकृत अधिक मिलता है, जबकि सीमांत किसान उत्पादन लागत के बोझ से दबता जाता है।

धनागरे (1983) ने भारत में किसान आंदोलनों और कृषि संरचना का गहन समाजशास्त्रीय विश्लेषण किया। उनका मानना था कि किसान समाज कोई समान समूह नहीं है, बल्कि यह आंतरिक विरोधाभासों और वर्गीय चेतना के विभिन्न स्तरों से विभाजित है। उनके अनुसार सीमांत किसान अपनी सामाजिक स्थिति के कारण अत्यंत संवेदनशील होते हैं। वे शोषक वर्ग के विरुद्ध बड़े आंदोलनों का हिस्सा बनने की क्षमता रखते हैं, बशर्ते उन्हें उचित राजनीतिक नेतृत्व मिले। हालाँकि, समकालीन उत्तर प्रदेश में पहचान की राजनीति और जातिगत ध्रुवीकरण ने सीमांत किसानों की वर्गीय एकजुटता को खंडित किया है।

पटनायक (1987) का कृषक वर्ग विभेदीकरण संबंधी सिद्धांत उत्तर प्रदेश की वर्तमान सीमांत कृषि व्यवस्था को समझने के लिए महत्वपूर्ण ढाँचा प्रदान करता है। पटनायक का मानना है कि पूँजीवादी बाजार व्यवस्था में जब राज्य छोटे पैमाने की कृषि को बिना पर्याप्त सुरक्षा के खुले बाजार के हवाले कर देता है, तो कृषि संकट अनिवार्य हो जाता है। उत्पादन लागत में वृद्धि और सीमांत किसानों की उपज के मूल्य निर्धारण में बिचौलियों की भूमिका किसानों को ऋण के जाल में धकेलती है।

हसन (1998) ने उत्तर प्रदेश में राज्य और वर्चस्वशाली जातियों के बीच सत्ता संबंधों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण किया। उनका तर्क है कि उत्तर प्रदेश में राज्य की नीतियाँ और प्रशासनिक मशीनरी ऐतिहासिक रूप से ग्रामीण समाज के प्रभावशाली किसान वर्गों के हितों से प्रभावित होती रही हैं। इसके विपरीत, संसाधनों और राजनीतिक पहुँच से वंचित सीमांत किसान राज्य की नीति–निर्माण प्रक्रिया में प्रायः अदृश्य बने रहे हैं।

गुप्ता (2005) ने भारतीय ग्रामीण समाज के पारंपरिक दृष्टिकोण को चुनौती दी। उन्होंने ग्रामीण समाज में कृषि के बदलते स्वरूप और गाँव के सामाजिक विघटन की ओर संकेत किया। समकालीन उत्तर प्रदेश के सीमांत किसानों के संदर्भ में यह विचार महत्वपूर्ण है। आज अनेक सीमांत किसान यह नहीं चाहते कि उनके बच्चे भविष्य में खेती को अपना मुख्य व्यवसाय बनाएँ। ग्रामीण युवाओं में कृषि के प्रति असंतोष और अलगाव की भावना बढ़ रही है।

ब्रेमन (2007) के सिद्धांत से यह समझने में सहायता मिलती है कि ग्रामीण संकट के कारण सीमांत किसान अपनी जड़ों से कटकर शहरों की ओर प्रवास करने पर क्यों विवश होते हैं। राज्य की नीतियाँ प्रायः ऊपर से नीचे की ओर संचालित होती हैं, जिससे स्थानीय वास्तविकताओं और सीमांत किसानों की विशिष्ट आवश्यकताओं, जैसे लघु सिंचाई उपकरण और स्थानीय मंडियों, की उपेक्षा हो जाती है।

थोराट (2010) ने स्पष्ट किया कि कृषि जोत के आकार का सामाजिक समूहों और जाति से सीधा संबंध है। उत्तर प्रदेश में अनेक सीमांत किसान अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्गों की निम्न सामाजिक श्रेणियों से आते हैं। अतः भूमि का स्वामित्व केवल आर्थिक संपत्ति नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और सम्मान की लड़ाई का भी केंद्र है।

शोध कार्यप्रणाली– प्रस्तुत शोध–पत्र की प्रकृति मुख्य रूप से गुणात्मक और विश्लेषणात्मक है। चूँकि समाजशास्त्रीय समझ केवल सांख्यिकीय आँकड़ों तक सीमित नहीं रह सकती, इसलिए इस शोध में मानवीय अनुभवों, संरचनात्मक बाधाओं और सामाजिक प्रक्रियाओं को समझने के लिए गुणात्मक दृष्टिकोण को प्राथमिकता दी गई है।

शोध का सैद्धांतिक ढाँचा– इस अध्ययन में संरचनात्मक–प्रकार्यात्मक तथा द्वंद्वात्मक समाजशास्त्र के सिद्धांतों का सम्मिश्रित उपयोग किया गया है। एक ओर यह देखा गया है कि राज्य एक संस्था के रूप में ग्रामीण समाज में संतुलन बनाए रखने के लिए क्या कार्य कर रहा है, वहीं दूसरी ओर भूमि और संसाधनों के असमान वितरण से उत्पन्न होने वाले वर्गीय द्वंद्व का भी विश्लेषण किया गया है।

आँकड़ों के स्रोत– प्रस्तुत शोध–पत्र की प्रामाणिकता, विश्वसनीयता और अकादमिक सुदृढ़ता सुनिश्चित करने के लिए बहु–स्तरीय द्वितीयक आँकड़ों का व्यवस्थित रूप से उपयोग किया गया है। कृषि गणना, 2015–16 भारत सरकारः इसके माध्यम से उत्तर प्रदेश में भूमि जोतों के आकार, वितरण और विभिन्न सामाजिक श्रेणियों के बीच भूमि स्वामित्व के प्रतिरूप से संबंधित आँकड़े लिए गए हैं। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन, 77वाँ दौर, 2019: ग्रामीण भारत में कृषि परिवारों की स्थिति के आकलन तथा परिवारों के पास भूमि और पशुधन संबंधी रिपोर्टों से सीमांत किसानों की आय के स्रोत, उपभोग व्यय, ऋणग्रस्तता और संस्थागत ऋण तक पहुँच संबंधी आँकड़ों का उपयोग किया गया है। राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक संबंधी वित्तीय समावेशन सर्वेक्षणः ग्रामीण क्षेत्रों में औपचारिक और अनौपचारिक वित्तीय समावेशन की वास्तविक स्थिति तथा सीमांत परिवारों पर इसके सामाजिक प्रभावों के विश्लेषण के लिए इन आँकड़ों का उपयोग किया गया है।

नीति आयोग एवं उत्तर प्रदेश सांख्यिकी डायरी, 2022–25: राज्य द्वारा संचालित विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं, जैसे प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि, मनरेगा और नलकूप सिंचाई सब्सिडी आदि के आवंटन तथा लाभार्थियों से संबंधित आँकड़ों की समीक्षा की गई है। अकादमिक एवं प्रतिष्ठित समाजशास्त्रीय शोध–पत्रिकाएँः उत्तर प्रदेश के कृषि संकट, प्रवासन और ग्रामीण श्रम गतिशीलता से संबंधित समकालीन शोध लेखों का आलोचनात्मक अध्ययन किया गया है।

विश्लेषण की विधि– इस शोध–पत्र में सांख्यिकीय आँकड़ों को मात्र आर्थिक संकेतकों के रूप में देखने के बजाय उनका समाजशास्त्रीय पाठ्य–विश्लेषण और गुणात्मक संरचनात्मक विश्लेषण किया गया है। एकत्रित मात्रात्मक आँकड़ों को सर्वप्रथम तालिकाओं के माध्यम से वर्गीकृत किया गया। इसके पश्चात इन आँकड़ों का विश्लेषण समाजशास्त्रीय एवं संरचनात्मक–मार्क्सवादी परिप्रेक्ष्य में किया गया है। उदाहरण के लिए, यदि आँकड़े बताते हैं कि उत्तर प्रदेश के 80 प्रतिशत से अधिक किसानों के पास 1 हेक्टेयर से कम भूमि है, तो विश्लेषण केवल आर्थिक अलाभकारिता तक सीमित नहीं रहता, बल्कि यह भी देखा जाता है कि भूमि के निरंतर विखंडन ने ग्रामीण संयुक्त परिवारों के विघटन को कैसे गति दी और जातिगत पदानुक्रम को बनाए रखने अथवा बदलने में इसकी क्या भूमिका रही।

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- III, Issues-41, YEAR- July-Sept. 2026

द्वितीयक आँकड़े एवं गुणात्मक समाजशास्त्रीय विश्लेषण– उत्तर प्रदेश की ग्रामीण सामाजिक–आर्थिक संरचना को समझे बिना राज्य की नीतियों के प्रभाव का मूल्यांकन अधूरा है। निम्नलिखित आँकड़े उत्तर प्रदेश में सीमांत कृषकों की वास्तविक स्थिति को सामाजिक विमर्श के साथ रेखांकित करते हैं।

तालिका 1. उत्तर प्रदेश में छोटी क्रियाशील जोत का श्रेणीवार आकार और वितरण

जोत की श्रेणी	भूमि का पैमाना	उत्तर प्रदेश में कुल जोतों का प्रतिशत	राज्य के कुल कृषि क्षेत्र में हिस्सेदारी	औसत जोत आकार
सीमांत	1.00 हेक्टेयर से कम	80.18 प्रतिशत	41.74 प्रतिशत	0.38 हेक्टेयर
लघु	1.00 से 2.00 हेक्टेयर	12.63 प्रतिशत	26.12 प्रतिशत	1.39 हेक्टेयर

स्रोतः कृषि गणना 2015–16 कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार।

विस्तृत सांख्यिकीय एवं समाजशास्त्रीय विश्लेषण– तालिका 1 के आँकड़ें उत्तर प्रदेश की एक अत्यंत विषम और चिंताजनक तस्वीर प्रस्तुत करते हैं। राज्य के कुल कृषकों में से 80.18 प्रतिशत सीमांत श्रेणी में हैं, लेकिन उनके पास राज्य के कुल कृषि योग्य क्षेत्र का केवल 41.74 प्रतिशत हिस्सा है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से 0.38 हेक्टेयर का औसत जोत आकार यह स्पष्ट करता है कि ग्रामीण उत्तर प्रदेश में भूमि अब केवल उत्पादन और संचय का साधन नहीं रह गई है, बल्कि यह अस्तित्व और पहचान का एक सूक्ष्म प्रतीक बनती जा रही है।

तालिका 2. सीमांत कृषि परिवारों की ऋणग्रस्तता के स्रोत, ब्याज दरें और सामाजिक प्रभाव

ऋण का स्रोत प्रकार	सीमांत परिवारों में हिस्सेदारी	औसत वार्षिक ब्याज दर	ऋण का प्राथमिक उद्देश्य	गुणात्मक सामाजिक–आर्थिक प्रभाव
संस्थागत स्रोत/ वाणिज्यिक बैंक, ग्रामीण बैंक, सहकारी समितियाँ, किसान क्रेडिट कार्ड	48.5 प्रतिशत	4 प्रतिशत–9 प्रतिशत	रासायनिक उर्वरक, उन्नत बीज, ट्रैक्टर एवं नलकूप किराया	जटिल कागजी प्रक्रिया, बैंक अधिकारियों द्वारा उत्पीड़न का भय, चूक की स्थिति में सामाजिक लज्जा और भूमि कुर्की का मानसिक तनाव
गैर–संस्थागत स्रोत/ स्थानीय साहूकार, वर्चस्वशाली जातियों के बड़े किसान, आढ़ती व्यापारी	51.5 प्रतिशत	24 प्रतिशत–36 प्रतिशत	स्वास्थ्य संबंधी आकस्मिक व्यय, परिवार के सदस्यों का विवाह, दैनिक उपभोग, श्राद्ध एवं सामाजिक रीति–रिवाज	पीढ़ीगत ऋणग्रस्तता, फसल को कम कीमत पर बेचने की मजबूरी, आधुनिक बंधुआ श्रम का उदय और सामाजिक स्वायत्तता का ह्रास

स्रोतः राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन, 77वाँ दौर (2019) के उत्तर प्रदेश–विशिष्ट अनुमानों एवं ग्रामीण वित्तीय समावेशन संबंधी रिपोर्टों पर आधारित।

यहाँ एक महत्वपूर्ण तथ्य सामने आता है कि सीमांत परिवारों के 51.5 प्रतिशत ऋण का स्रोत गैर–संस्थागत क्षेत्र है। इन स्रोतों पर ब्याज दर 24 प्रतिशत से 36 प्रतिशत तक बताई गई है। इससे ऋणग्रस्तता केवल आर्थिक समस्या नहीं रहती, बल्कि सामाजिक निर्भरता को भी जन्म देती है।

तालिका 3. सामाजिक श्रेणियों के अनुसार उत्तर प्रदेश में भूमि जोतों का वितरण

सामाजिक श्रेणी	कुल जोतों में हिस्सेदारी	सीमांत किसानों का प्रतिशत	भूमि स्वामित्व का स्वरूप एवं सामाजिक स्थिति
अनुसूचित जाति	16.20 प्रतिशत	88.65 प्रतिशत	अत्यंत बिखरी हुई एवं बंजर कम उपजाऊ भूमि, सिंचाई साधनों का अभाव, उच्च पराश्रितता
अनुसूचित जनजाति	0.08 प्रतिशत	78.40 प्रतिशत	मुख्यतः सीमांत क्षेत्रों और वनों से सटे क्षेत्रों में लघु जोतें, संस्थागत ऋण से काफी हद तक वंचित
अन्य पिछड़ा वर्ग	54.32 प्रतिशत	79.10 प्रतिशत	मध्यवर्ती जातियों, जैसे यादव, मौर्य और कुर्मी, में कुछ बड़े किसान, किंतु निम्न पिछड़ी जातियों में तीव्र सीमांतीकरण
सामान्य/ उच्च जातियाँ	29.40 प्रतिशत	68.20 प्रतिशत	औसत जोत आकार अपेक्षाकृत बड़ा, उपजाऊ क्षेत्रों पर अधिक नियंत्रण, संस्थागत एवं राजनीतिक पूँजी तक बेहतर पहुँच

स्रोतः उत्तर प्रदेश कृषि गणना रिपोर्ट तथा नीति आयोग के सामाजिक–आर्थिक संकेतक संबंधी आँकड़ों के समेकित विश्लेषण पर आधारित।

सीमांत परिवारों की आय की संरचना– सीमांत परिवारों की आर्थिक लाचारी को समझने के लिए केवल उनकी जोत का आकार देखना पर्याप्त नहीं है। उनकी आय के ढाँचे का विश्लेषण भी आवश्यक है।

राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन के 77वें दौर के अनुसार सीमांत किसान परिवारों की आय में खेती के अतिरिक्त मजदूरी, पशुपालन और गैर–कृषि कार्यों की महत्वपूर्ण भूमिका है।

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- III, Issues-41, YEAR- July-Sept. 2026

तालिका 4. सीमांत किसान परिवारों की औसत मासिक आय के स्रोत

आय का स्रोत	कुल मासिक आय में हिस्सेदारी
मजदूरी/ दैनिक श्रम	52.0 प्रतिशत
फसल उत्पादन	22.5 प्रतिशत
पशुपालन	14.5 प्रतिशत
गैर–कृषि व्यवसाय अन्य	11.0 प्रतिशत

टिप्पणीः यह आँकड़ा दर्शाता है कि सीमांत किसान नाममात्र के लिए किसान हैं, जबकि उनकी आय का सबसे बड़ा हिस्सा मजदूरी और दैनिक श्रम से आता है।

गहन समाजशास्त्रीय विश्लेषण– उपरोक्त तालिकाओं और आँकड़ों के आधार पर ग्रामीण उत्तर प्रदेश के अंतर्संबंधों का यदि गुणात्मक समाजशास्त्रीय अध्ययन किया जाए, तो तीन प्रमुख संरचनात्मक आयाम सामने आते हैं।

जाति, वर्ग और भूमि का त्रिकोणीय संबंध– उत्तर प्रदेश के ग्रामीण सामाजिक स्तरीकरण का इतिहास इस बात का गवाह है कि यहाँ भूमि केवल आर्थिक संपत्ति नहीं रही है, बल्कि सामाजिक सम्मान, राजनीतिक शक्ति और सांस्कृतिक पूँजी का प्रमुख स्रोत रही है। तालिका 3 के आँकड़े स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि अनुसूचित जातियों के बीच सीमांत किसानों का प्रतिशत 88.65 प्रतिशत है। यह तथ्य इस बात की पुष्टि करता है कि ग्रामीण उत्तर प्रदेश में जो वर्ग आर्थिक रूप से सबसे नीचे है, वह सामाजिक पदानुक्रम में भी मुख्यतः निम्न जातियों के रूप में स्थित है। पियरे बोरदियू के सामाजिक पुनरुत्पादन संबंधी सिद्धांत के आलोक में भूमि का यह असमान वितरण पीढ़ी–दर–पीढ़ी सामाजिक असमानता को पुनरुत्पादित करता है। जब किसी सीमांत किसान को सिंचाई के लिए पानी की आवश्यकता होती है और उसके पास अपना नलकूप नहीं होता, तो उसे गाँव के प्रभावशाली बड़े किसान से पानी खरीदना पड़ सकता है। इस आर्थिक लेन–देन में सामाजिक निर्भरता भी जुड़ जाती है। इस प्रकार भूमि के सीमांतीकरण ने ग्रामीण उत्तर प्रदेश में एक नए प्रकार के कृषक –सामंतवाद को जीवित रखा है।

प्रवासन और अदृश्य श्रम का समाजशास्त्रीय परीक्षण– तालिका 4 के आँकड़ें स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि सीमांत किसान परिवारों की घरेलू अर्थव्यवस्था का 52 प्रतिशत हिस्सा मजदूरी और दैनिक श्रम से आता है।

स्थानीय स्तर पर कृषि मजदूरी में मौसमी ठहराव और मजदूरी की कम दरों के कारण सीमांत परिवारों में अस्तित्व के लिए प्रवासन एक अनैच्छिक सामाजिक प्रक्रिया बन गया है।

ग्रामीण संकट → पुरुष प्रवासन → महिलाओं पर दोहरा बोझ → अधिकारों का अभाव

जब पुरुष सदस्य काम की तलाश में बाहर चले जाते हैं, तो पीछे छूटे छोटे खेतों का प्रबंधन, श्रम, फसलों की सुरक्षा और स्थानीय स्तर पर सौदेबाजी की पूरी जिम्मेदारी महिलाओं के कंधों पर आ जाती है।महिलाएँ खेतों में रोपाई, निराई और कटाई जैसे कठिन शारीरिक श्रम के साथ–साथ घर और बच्चों की देखभाल भी करती हैं। इसलिए प्रवासन महिलाओं को स्वतः सशक्त नहीं करता, बल्कि कई मामलों में उनके श्रम के दोहरे शोषण को जन्म देता है।

कृषि पारिस्थितिकी और क्षेत्रीय असमानता– उत्तर प्रदेश कोई एकसमान भौगोलिक अथवा सामाजिक इकाई नहीं है। विभिन्न क्षेत्रों में सीमांत किसानों की समस्याएँ अलग–अलग सामाजिक एवं पारिस्थितिक परिस्थितियों से प्रभावित हैं।

पश्चिमी उत्तर प्रदेशः हरित क्रांति के प्रभाव के कारण यहाँ कृषि का अत्यधिक व्यावसायीकरण हुआ है। यद्यपि यहाँ भी जोतों का आकार घट रहा है, लेकिन मजबूत सिंचाई व्यवस्था और नकदी फसलों, जैसे गन्ना, के कारण सीमांत किसान कुछ हद तक बाजार से जुड़े हुए हैं। फिर भी वे बड़े पूँजीवादी किसानों के सामाजिक और राजनीतिक वर्चस्व के अधीन रहते हैं।

पूर्वी उत्तर प्रदेशः पूर्वी उत्तर प्रदेश अर्थात् पूर्वांचल में अत्यधिक जनसंख्या घनत्व और तीव्र भूमि विखंडन प्रमुख समस्याएँ हैं। बाढ़ और जलभराव की बारंबारता सीमांत किसानों की फसलों को प्रभावित करती है, जिससे वे स्थानीय साहूकारों के ऋण–जाल के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं।

बुंदेलखंडः बुंदेलखंड क्षेत्र लगातार सूखे और पथरीली भूमि की समस्या से जूझ रहा है। यहाँ पशुपालन, जो कुल आय का 14.5 प्रतिशत है, सीमांत परिवारों के लिए महत्वपूर्ण सहारा है।

हालाँकि, आवारा पशुओं की समस्या के कारण कृषि और सामाजिक जीवन दोनों को भारी क्षति पहुँच रही है।

राज्य के हस्तक्षेप का आलोचनात्मक मूल्यांकन– समकालीन दौर में कल्याणकारी राज्य ने सीमांत किसानों के संकट को कम करने के लिए अनेक प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष हस्तक्षेप किए हैं। लेकिन समाजशास्त्रीय विश्लेषण इन योजनाओं के अंतर्निहित विरोधाभासों को भी सामने लाता है।

प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि और प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता– प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि के माध्यम से सीमांत किसानों को मिलने वाली 6000 रुपये वार्षिक प्रत्यक्ष सहायता संकट के समय एक वित्तीय सहारा प्रदान करती है। गुणात्मक दृष्टि से देखा जाए तो इस राशि का उपयोग सीमांत किसान मुख्यतः बीज, उर्वरक और अन्य कृषि आवश्यकताओं को खरीदने में करते हैं। लेकिन यह योजना किसान की क्रय शक्ति में कोई बड़ा संरचनात्मक परिवर्तन नहीं करती। डीजल, कीटनाशक, बिजली और अन्य कृषि लागतों में वृद्धि की तुलना में 6000 रुपये वार्षिक राशि सीमित सहायता प्रदान करती है।

इसलिए राज्य को केवल प्रत्यक्ष नकद सहायता तक सीमित न रहकर भूमि सुधार, सिंचाई, बाजार व्यवस्था और संस्थागत ऋण तक पहुँच जैसी संरचनात्मक समस्याओं पर भी ध्यान देना चाहिए।

मनरेगा और ग्रामीण श्रम बाजार में राज्य का हस्तक्षेप– महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना ने उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में मजदूरी की न्यूनतम दर निर्धारित करने तथा सीमांत किसानों को गैर–कृषि मौसम में बेरोजगारी से बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

इससे स्थानीय स्तर पर साहूकारों के आर्थिक दबाव को कुछ हद तक कम किया गया है, हालाँकि, मनरेगा के कार्यान्वयन में कई प्रशासनिक और सामाजिक समस्याएँ भी हैं।

मजदूरी भुगतान में विलंब– प्रशासनिक शिथिलता के कारण मजदूरी का भुगतान कई बार विलंब से होता है। इससे सीमांत किसान अपनी दैनिक आवश्यकताओं के लिए पुनः अनौपचारिक ऋण लेने को विवश हो जाते हैं।

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- III, Issues-41, YEAR- July-Sept. 2026

जातिगत भेदभाव– कई ग्राम पंचायतों में कार्य आवंटन और कार्यस्थल पर सुविधाओं के वितरण में जातिगत स्तरीकरण की भूमिका देखी जाती है।

न्यूनतम समर्थन मूल्य और संस्थागत बहिष्करण– राज्य द्वारा घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य की व्यवस्था सैद्धांतिक रूप से किसानों को बाजार के उतार–चढ़ाव से सुरक्षा प्रदान करने के लिए बनाई गई है। परंतु सीमांत किसानों के संदर्भ में यह व्यवस्था कई बार संस्थागत बहिष्करण का उदाहरण बन जाती है। यदि किसी सीमांत किसान की औसत जोत केवल 0.38 हेक्टेयर है, तो उसका कुल उत्पादन इतना कम हो सकता है कि घरेलू उपभोग के बाद बाजार में बेचने के लिए केवल 2 से 5 क्विंटल अनाज ही बच पाए। इतनी कम मात्रा की उपज को लेकर सरकारी खरीद केंद्र तक जाना कई सीमांत किसानों के लिए आर्थिक रूप से व्यवहार्य नहीं होता। परिणामस्वरूप उन्हें अपनी उपज स्थानीय व्यापारी या बिचौलिए को सरकारी निर्धारित कीमत से कम मूल्य पर बेचनी पड़ सकती है। इस प्रकार राज्य का नियामक ढाँचा कई बार बिचौलियों और बड़े व्यापारियों के प्रभाव को समाप्त करने में पर्याप्त सफल नहीं हो पाता।

निष्कर्ष– उत्तर प्रदेश के सीमांत किसानों और राज्य की भूमिका का यह गुणात्मक समाजशास्त्रीय विश्लेषण इस बात की पुष्टि करता है कि राज्य में कृषि संरचना गहरे संकट के दौर से गुजर रही है। लगभग 80.18 प्रतिशत किसानों के सीमांत श्रेणी में होने के बावजूद ग्रामीण शक्ति–संरचना में उनका स्थान सबसे कमजोर है। भूमि का सूक्ष्म आकार, विशेषकर 0.38 हेक्टेयर का औसत सीमांत जोत आकार, पारंपरिक कृषि को आर्थिक रूप से कमजोर बनाता है। इससे विकृषकीकरण और सर्वहारीकरण की प्रक्रियाएँ तेज होती हैं। ग्रामीण समाज में जाति और वर्ग के पुराने समीकरण भले ही कुछ हद तक बदले हों, लेकिन आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण के मामले में ये आज भी नए रूपों में सक्रिय हैं।

प्रवासन ने ग्रामीण परिवारों को एक ओर आर्थिक सहारा दिया है, वहीं दूसरी ओर ग्रामीण महिलाओं पर कृषि और घरेलू श्रम का अतिरिक्त बोझ डाल दिया है। राज्य की नीतियों के संबंध में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वर्तमान नीतियाँ मुख्यतः संकट प्रबंधन पर अधिक केंद्रित हैं, न कि संरचनात्मक परिवर्तन पर।

प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि और राशन जैसी योजनाएँ सीमांत किसानों को भुखमरी और अत्यधिक गरीबी से बचाने में महत्वपूर्ण हैं, लेकिन वे उन्हें आत्मनिर्भर और आर्थिक रूप से गतिशील बनाने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। जब तक राज्य भूमि विखंडन, गैर–संस्थागत ऋण, बाजार शोषण और बिचौलियों की समस्या जैसे बुनियादी मुद्दों पर कठोर कदम नहीं उठाता, तब तक सीमांत किसानों की स्थिति में व्यापक परिवर्तन संभव नहीं है।

नीतिगत सुझाव– सामूहिक एवं सहकारी खेती को बढ़ावाः राज्य को नीतिगत स्तर पर सीमांत किसानों को अपनी छोटी–छोटी जोतों को मिलाकर किसान उत्पादक संगठन और सहकारी समितियों के माध्यम से सामूहिक खेती के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। इससे आधुनिक तकनीकों का सामूहिक उपयोग संभव होगा तथा बाजार में किसानों की सौदेबाजी की शक्ति बढ़ेगी।

स्थानीय लघु मंडियों की स्थापनाः बड़े कृषि उपज बाजार केंद्रों के अतिरिक्त ग्राम पंचायत स्तर पर छोटे खरीद केंद्र स्थापित किए जाने चाहिए, ताकि कम मात्रा में अनाज बेचने वाले सीमांत किसानों को भी सीधे न्यूनतम समर्थन मूल्य का लाभ मिल सके और बिचौलियों की भूमिका कम हो।

गैर–कृषि ग्रामीण रोजगार का विविधीकरणः केवल मनरेगा पर निर्भर रहने के बजाय राज्य को ग्रामीण क्षेत्रों में खाद्य प्रसंस्करण, कुटीर उद्योग, हस्तशिल्प और पशुपालन के लिए स्थानीय मूल्य श्रृंखलाओं का विकास करना चाहिए। इससे प्रवासन की दर को नियंत्रित करने में सहायता मिल सकती है।

आवारा पशु समस्या का स्थायी समाधानः उत्तर प्रदेश के विशिष्ट संदर्भ में सीमांत किसानों की फसलों को आवारा पशुओं से बचाने के लिए ग्राम पंचायत स्तर पर वैज्ञानिक एवं प्रभावी ढंग से संचालित गौशालाओं और पशु प्रबंधन केंद्रों की व्यवस्था की जानी चाहिए। सीमांत किसान के लिए फसल का छोटा–सा नुकसान भी उसे ऋण के गहरे जाल में धकेल सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. थॉर्नर, डी. (1956). द एग्रेरियन प्रॉस्पेक्ट इन इंडिया. फाइव लेक्चर्स ऑन लैंड रिफॉर्म डिलीवर्ड इन 1955 एट द दिल्ली स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स. यूनिवर्सिटी प्रेस।
2. देसाई, ए. आर. (1979). पीजेंट स्ट्रगल्स इन इंडिया. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
3. एटिएन, जी. (1982). इंडियाज चेंजिंग रूरल सीन, 1963–1979. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. धनगरे, डी. एन. (1983). पीजेंट मूवमेंट्स इन इंडिया, 1920–1950. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
5. पट्टनायक, यू. (1987). पीजेंट क्लास डिफरेंशिएशन. ए स्टडी इन मेथड विद रेफरेंस टू हरियाणा. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
6. ब्रेमन, जे. (1996). फुटलूज लेबरः वर्किंग इन इंडियाज इनफॉर्मल इकोनॉमी. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
7. हसन, जेड. (1998). क्वेस्ट फॉर पावर. ऑपोजिशनल मूवमेंट्स एंड पोस्ट–कांग्रेस पॉलिटिक्स इन उत्तर प्रदेश. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
8. पाई, एस. (2002). दलित असर्शन एंड द अनफिनिश्ड डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन. द बहुजन समाज पार्टी इन उत्तर प्रदेश. सेज पब्लिकेशंस।
9. गुप्ता, डी. (2005). व्हिदर द इंडियन विलेज? कल्चर एंड एग्रीकल्चर इन 'रूरल' इंडिया. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली. 40(8). 751–758.
10. थोराट, एस. (2010). कास्ट, सोशल एक्सक्लूजन एंड पॉवर्टी लिंकेजेस. कॉन्सेप्ट, मेजरमेंट एंड एम्पिरिकल एविडेंस. इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ दलित स्टडीज।
11. श्रीवास्तव, आर. (2011). इंटरनल माइग्रेशन इन इंडिया. एन ओवरव्यू ऑफ इट्स फीचर्स, ट्रेंड्स एंड पॉलिसी चौलेंजेज. इन नेशनल वर्कशॉप ऑन इंटरनल माइग्रेशन एंड ह्यूमन डेवलपमेंट इन इंडिया. वॉल्यूम 2. पृष्ठ 7–47. यूनेस्को।
12. जोधका, एस. एस. (2014). कास्ट इन कंटेम्परेरी इंडिया. रूटलेज।
13. प्रसाद, एस. (2015), इम्पैक्ट ऑफ रूरल आउट–माइग्रेशन ऑन एग्रीकल्चर इन उत्तर प्रदेश, इंडिया, एशियन जर्नल ऑफ डेवलपमेंट मैटर्स, 9(1), 78–108।

14. रूरल इंडिया, 2019. नेशनल स्टैटिस्टिकल ऑफिस. मिनिस्ट्री ऑफ स्टैटिस्टिक्स एंड प्रोग्राम इम्प्लीमेंटेशन।
15. भारत सरकार. (2020). ऑल इंडिया रिपोर्ट ऑन एग्रीकल्चर सेंसस 2015–16. मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर एंड फार्मर्स वेलफेयर. डिपार्टमेंट ऑफ एग्रीकल्चर. कोऑपरेशन एंड फार्मर्स वेलफेयर।
16. गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर एंड फार्मर्स वेलफेयर, डिपार्टमेंट ऑफ एग्रीकल्चर, कोऑपरेशन एंड फार्मर्स वेलफेयर, (2020), एग्रीकल्चर सेंसस 2015–16: ऑल इंडिया रिपोर्ट ऑन नंबर एंड एरिया ऑफ ऑपरेशनल होल्डिंग्स, नई दिल्ली: गवर्नमेंट ऑफ इंडिया।
17. नेशनल स्टैटिस्टिकल ऑफिस, मिनिस्ट्री ऑफ स्टैटिस्टिक्स एंड प्रोग्राम इम्प्लीमेंटेशन, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, (2021), सिचुएशन असेसमेंट ऑफ एग्रीकल्चरल हाउसहोल्ड्स एंड लैंड एंड लाइवस्टॉक होल्डिंग्स ऑफ हाउसहोल्ड्स इन रूरल इंडिया, 2019, रिपोर्ट नंबर 587, 77वाँ राउंड, नई दिल्ली: गवर्नमेंट ऑफ इंडिया।
18. इकोनॉमिक्स एंड स्टैटिस्टिक्स डिवीजन, स्टेट प्लानिंग इंस्टीट्यूट, प्लानिंग डिपार्टमेंट, गवर्नमेंट ऑफ उत्तर प्रदेश, (2022), स्टैटिस्टिकल डायरी, उत्तर प्रदेश 2022, लखनऊ: गवर्नमेंट ऑफ उत्तर प्रदेश।
19. नेशनल बैंक फॉर एग्रीकल्चर एंड रूरल डेवलपमेंट (नाबार्ड), (2024), ऑल इंडिया रूरल फाइनेंशियल इन्क्लूजन सर्वे 2021–22, मुंबई: नेशनल बैंक फॉर एग्रीकल्चर एंड रूरल डेवलपमेंट।
20. उत्तर प्रदेश सरकार. (2025). स्टैटिस्टिकल डायरी. उत्तर प्रदेश 2025. इकोनॉमिक्स एंड स्टैटिस्टिक्स डिवीजन. स्टेट प्लानिंग इंस्टीट्यूट।
21. नीति आयोग, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, (2025), ए मैक्रो एंड फिस्कल लैंडस्केप ऑफ द स्टेट ऑफ उत्तर प्रदेश, नई दिल्ली: नीति आयोग।
22. वर्की, जे. (2026), एक्सप्लॉइटेशन, इंटरलिंक्ड ट्रांजैक्शंस एंड एग्रेरियन क्लास रिलेशंस इन उत्तर प्रदेश, इंडिया, जर्नल ऑफ एग्रेरियन चेंज।

*****